## (१)
## प्रातःकालीन विनति

राधास्वामी नाम। जो गावे, सोई तरे॥
कलकलेश सब नाश। सुख पावे सब दुःख हरे॥ १॥
ऐसा नाम अपार। कोई भेद न जानई॥
जो जाने सो पार। बहुरि न जग में जनमई॥ २॥
राधास्वामी गायकर। जनम सुफल करले॥
यही नाम निज नाम है। मन अपने धरले॥ ३॥
बैठक स्वामी अद्भुती। राधा निरख निहार॥
और न कोई लख सके। शोभा अगम अपार॥ ४॥
गुप्त रूप जहाँ धारिया। राधास्वामी नाम॥
बिना मेहर नहिं पावई। जहाँ कोई विश्राम॥ ५॥
करुँ बंदगी राधास्वामी आगे॥
जिन् परतापं जीव बहु जागे॥ ६॥
बारम्बार करुँ परनाम।
सत्गुरु पदम धाम सतनाम॥ ७॥
आदि अनादि जुगादि अनाम।
संत स्वरूप छोड़ निज धाम॥ ८॥
आये भौजल नाव लगाई।



हमसे जीवन लिया चढ़ाई॥ ९॥
शब्द दृढ़ाया सुरत बताई।
करम भरम से लिया बचाई॥ १०॥
कोटि कोटि करुँ वन्दना।
अरब खरब दंडौत॥
राधास्वामी मिल गये।
खुला भक्ति का सोत॥ ११॥
भक्ति सुनाई सबसे न्यारी।
वेद कतेब न ताहि बिचारी॥ १२॥
सत्तपुरुष चौथे पद बासा।
संतन का वहाँ सदा बिलासा॥ १३॥
सो घर दरसाया गुरु पूरे।
बीन बजे जहँ अचरज तुरे॥ १४॥
आगे अलख पुरुष दरबारा।
देखा जाय सुरत से सारा॥ १५॥
तिस पर अगम लोक इक न्यारा।
संत सुरत कोई करत विहारा॥ १६॥

तहाँ से दरसे अटल अटारी।
अद्‌भुत राधास्वामी महल सँवारी॥ १७ ॥
सुरत हुई अतिकर मगनानी।
पुरुष अनामी जाय समानी॥ १८ ॥

(२)

## सान्ध्यकालीन विनति

बार बार करूँ विनती। राधास्वामी आगे॥
दया करो दाता मेरे। चित चरणन लागे ॥ १ ॥
जन्म जन्म रही भूल में। नहिं पाया भेदा ॥
काल करम के जाल में। रहि भोगत खेदा ॥ २ ॥
जगत जीव भरमत फिरें। नित चारों खानी॥
ज्ञानी जोगी पिल रहे। सब मन की घानी॥ ३ ॥
भाग जगा मेरा आदिका। मिले सतगुरु आई॥
राधास्वामी धाम का। मोहि भेद जनाई ॥ ४ ॥
ऊँच से ऊँचा देश है। वह अधर ठिकानी॥
बिना संत पावे नहीं। श्रुत शब्द निशानी ॥ ५ ॥
राधास्वामी नाम की। मोहिं महिमा सुनाई ॥
विरह अनुराग जगाय के। घर पहुँचूँ भाई ॥ ६ ॥



साध संग कर सार रस। मैंने पिया अघाई ॥
प्रेम लगा गुरु चरण में। मन शांति न आई ॥ ७ ॥
तड़प उठे बेकल रहूँ। कस पिया घर जाई ॥
दर्शन रस नित नित लहूँ। गहे मन थिरताई ॥ ८ ॥
सुरत चढ़े आकाश में। करे शब्द बिलासा ॥
धाम धाम निरखत चले। पावे निज घर वासा ॥९॥
यह आशा मेरे मन बसे । रहे चित्त उदासा ॥
विनय सुनो किरपा करो। दीजे चरण निवासा ॥१०॥
तुम बिन कोई समरथ नहीं । जासे माँगू दाना ॥
प्रेमधार बरखा करो। खोलो अमृत खाना ॥ ११ ॥
दीन दयाल दया करो। मेरे समरथ स्वामी॥
शुकर करूँ गावत रहुँ। नित राधास्वामी ॥ १२ ॥

(३)

## प्रातः और सान्ध्यकालीन विनति

बार बार कर जोड़ कर। सविनय करूँ पुकार॥
साध संग मोहि देव नित। परम गुरु दातार ॥ १ ॥
कृपासिंधु समरथ पुरुष। आदि अनादि अपार॥

राधास्वामी परम पितु। मैं तुम सदा अधार ॥ २ ॥
बार बार बल जाऊँ। तनमन वारुँ चरण पर॥
क्या मुखले मैं गाउँ। मेहर करी जस कृपा कर॥ ३ ॥
धन्य धन्य गुरुदेव। दयासिंधु पूरण धनी॥
नित करूँ तुम सेव। अचल भक्ति मोंहि देव प्रभु॥ ४॥
दीन अधीन अनाथ। हाथ गहा तुम आन कर॥
अब राखो नित साथ। दीन दयाल कृपानिधि ॥ ५ ॥
काम क्रोध मद लोभ। सब विधि अवगुण हार मैं॥
प्रभु राखो मेरी लाज। तुम द्वारे अब मैं पड़ा ॥ ६ ॥
राधास्वामी गुरु समरथ। तुम बिन और न दुसरा॥
अब करो दया प्रत्यक्ष। तुम दर एती विलंब क्यों॥ ७॥
दया करो मेरे साईयां। देव प्रेम की दात ॥
दुख सुख कछु व्यापे नहीं। छूटे सब उत्पात ॥ ८ ॥



(४)

## सद्गुरु वन्दना

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेव परम ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरून्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
स्थावरंजंगमं व्याप्तं येन कृत्स्नं चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
चिद्रुपेण परिव्याप्तं त्रैलोक्यं सचराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः।
तत्त्वज्ञानात परं नास्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
मन्नाथः श्रीजगन्नाथो मद्गुरूः श्रीजगद्गुरः।
मदात्मा सर्वभूतात्मा तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

गुरुरादिरनादिश्च गुरुः परमदैवतम्।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्त्तिम्।
द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादि लक्ष्यम्॥
एकंनित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षीभूतम्।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सत्गुरुं त्वां नमामि॥

हिन्दी अनुवाद :—
गुरु ही हैं ब्रह्मा, गुरु विष्णु हैं, गुरु ही हैं देव महेश्वर,
गुरु परब्रह्म भी हैं—उसी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
अखण्डमण्डलाकार में जो चराचर में परिव्याप्त उनके स्वरूप का दर्शन कराते हैं उसी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
अज्ञानता के तिमिर में आवृत्त जन के चक्षु ज्ञान-शलाकार द्वारा उन्मीलनकारी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
जो इस चराचर में स्थावर जंगम में व्याप्त हैं उनका स्वरूप जो दर्शन कराते हैं उसी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।



जो त्रिलोक में चराचर में चेतनारूप में परिव्याप्त हैं उनका स्वरूप जो दर्शन कराते हैं उसी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
गुरु से अधिक तत्व नहीं है, गुरु से अधिक तपस्या नहीं हैं, तत्वज्ञान के बाद कुछ नहीं हैं उसके प्रदाता श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
मेरे प्रभु हैं जगत के प्रभु, मेरे गुरु हैं जगत के गुरु, मेरी आत्मा है सर्वभूत की आत्मा, इसी ज्ञानदाता श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
गुरु ही हैं आदि एवं अनादि, गुरु ही हैं परम देवता, उनसे बढ़कर श्रेष्ठ कोई नहीं है, उसी श्रीगुरु को प्रणाम करता हूँ।
परम सुखद ब्रह्मज्ञानदाता, अद्वितीय, ज्ञान की प्रतिमूर्ति सर्वद्वन्द्व के अतीत, आकाश सदृश "तुम्हीं हो वही" बोध जाग्रतकारी एक, नित्य वर्त्तमान, विमल, अचंचल सकल धीशक्ति के साक्षी जो हैं उसी भावातीत त्रिगुण रहित हे सद्गुरु — तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

जय राधे राधे कृष्ण कृष्ण
गोबिन्द गोबिन्द बॅलो रे
राधे गोबिन्द गोबिन्द गोबिन्द गोबिन्द
गोबिन्द बोले सदा डाको रे।
छाड़ो रे मन कपट चातुरि
बदोने बॅलो हरि हरि
हरि नाम परमब्रहम जीवेरो मूल धर्म
अधर्म कुकर्म छाड़ो रे।
छाड़ो रे मॅन भवेरो आशा
अजपा नामे करो रे नेशा
राधे गोबिन्द नामटी बदोने लइये
नयन-नीरे सदा भासो रे।

**- श्रीश्रीठाकुर**

## यजन, याजन, इष्टभृति

यजन, याजन, इष्टभृति-- सत्संगी मात्र के लिए ही आवश्यक पालनीय नित्य व्रत है। सदाचार सम्पन्न हो निष्ठा और अनुराग के साथ इष्ट के नाम-ध्यान-परायण हो चलना, अनुसंधित्सु सेवा तथा साहचर्य के साथ



पारिपार्श्विक में उनका गुणानुकीर्त्तन करना -- और इष्टभरण के माध्यम से अपनी सर्वशक्ति इष्ट में केन्द्रायित कर सत्ता को अटूट कर देना - यही है यजन, याजन, इष्टभृति। किन्तु सबके मूल में ही चाहिए इष्टानुराग। अनुरक्त हृदय से उन्हें अनुसरण करने पर मनुष्य प्रकृत मंगल का अधिकारी होगा ही। प्रतिदिन प्रात:काल किसी भी कर्म के आरम्भ में ही श्रद्धा के साथ इष्टभृति अर्घ्य निवेदन करना चाहिए। यह निवेदित अर्घ्य प्रति तीसवें दिन दक्षिणा के साथ तथा संगठनी बारह पैसे मिलाकर इष्ट के यहाँ उनके निर्देशानुसार स्वहस्त अथवा स्वयं डाक द्वारा प्रेरण कर इष्टभ्राताओं को अपने से दो भोज्य प्रदान कर पारिपार्श्विक की सेवा के लिए कुछ अर्थ संरक्षण करें।

### इष्टभृति मन्त्र ( संस्कृत )

जीवनं करुणा सिन्धो! जगतस्त्वं जगत्पते।
भवत: कृपया लब्धं जीवनं सफलं मम॥
प्रागेव सर्वकार्य्येभ्यस्तवैव भोग-तृप्तये।
इष्टभृति: कृतास्माभि: कृपया गृहयतां प्रभो॥

## हिन्दी

जीव-जगत् जीवन-कारण करुणामय स्वामी।
पाया जन्म मिला सब-दया तुम्हारी अन्तर्यामी।
सर्वाग्र प्रात ही जगत्पते! तव तृप्ति और भोगार्थ
इष्टभृतिः यह-करके ग्रहण कृपा कर करो कृतार्थ।

### इष्टभृति-व्रत भंग होने पर

कम से कम एकदिन हविष्याशी रहकर सम्पूर्ण अनिवेदित अर्घ्य यानी जितने दिनों के अर्घ्य निवेदन नहीं किये गये हों उन्हें या उतने दिनों के अर्घ्य निवेदन करने में असमर्थ हों तो यथाशक्ति अर्घ्य निवेदन कर पुनः नियमित रूप से पालन करना चाहिए। इष्टभृति का निवेदित अर्घ्य किसी दूसरे कार्य में व्यय करने पर या चोरी हो जाने पर -- अनुताप के साथ दोष स्वीकार करते हुए भिक्षा द्वारा खोया या चोरी गया हुआ अर्घ्य संग्रह करके दूसरे दिन हविष्यान्न ग्रहण करना चाहिए। हविष्यान्न के दूसरे दिन संग्रहीत अर्थ को मन्त्र पाठ कर निवेदन करना चाहिए। (हविष्यान्न व्रत द्रष्टव्य)।



## स्वस्त्ययनी-व्रत

खास्थ्य का नियम व सदाचार पालन। अनिरूद्ध वृत्ति-प्रकृति को समुन्नत सम्वेगशाली करके इष्टस्वार्थ हेतू परिचालना। मंगलजनक चिंता का वास्तव रूपायण। जीवनवृद्धि के स्वार्थ को पारिपार्श्विकगण में इष्टयाजन द्वारा उद्‌बुद्ध करना। आहार्य ग्रहण के पूर्व नियमित इष्टार्घ्य प्रदान। यह पञ्चनीति समन्वित स्वस्त्ययनी व्रत अपने तथा परिवार के इष्टमुखी चलन को चलत्शील रखने के लिए प्रत्येक के लिए अवश्य ग्रहणीय है।

### स्वस्त्ययनी मन्त्र

श्रीविग्रहस्त्वं पुरूषोत्तमो मे वन्दे त्वां
सद्‌नुकूलचन्द्रम्।
त्वं हिष्टस्त्वमेव पूज्यः प्रतिष्ठायै ते
नियुनक्तु वृत्तिः।
तत्वानुकूलं यदि सत्यकामं मुहुः कृपया
कुरु कर्मनिष्ठम्।
सन्धित्सया सेवया याजनेन सर्वांस्त एवानुरंजयानि।

रोग-शोक-ग्रहदोष-बुद्धिविपर्य्याच्च मे।
दारिद्रयादि-सर्वदैन्यात् मुंच में त्वयि निष्ठया।
शान्तिं स्वस्तिं शुभं देहि, देहि कर्म सुकौशलम्।
देहि में जीवन-वृद्धि नियतं स्मृतिचिद्युते।

**अर्थः**- श्रीविग्रह तुम हो, तुम्हीं पुरुषोत्तम हो, मेरी अस्ति-वृद्धि के अनुकूल दीसि हो, तुम्हारी वन्दना करता हूँ। तुम्हीं इष्ट हो, तुम्हीं पूज्य हो, मेरी सभी वृत्तियां तुम्हारी ही प्रतिष्ठा में नियुक्त हों। सत्यकाम, तवानुकूल मुझे कृपा कर त्वत् कर्मनिष्ठ करो। सन्धित्सा, सेवा और याजन से जैसे सभी को इष्ट में अनुरंजित कर सकूँ। तुम्हारे प्रति निष्ठा मुझे रोग, शोक, ग्रहदोष, बुद्धि विपर्यय और दारिद्रयादि सर्वदैन्य से मुक्त कर दें। मुझे शांति दो, स्वस्ति दो और शुभ कर्म में सुकौशल दो - और दो मुझे निरंतर चेतनावाही स्मृतियुक्त जीवन और वृद्धि।



## स्वस्त्ययनी-व्रत भंग होने पर

तीन दिन अहोरात्र उपवास रहकर - असमर्थ होने से तीनों दिन एक बेला परिमित हविष्यान्न ग्रहण कर जितने दिनों तक अर्घ्य दान नहीं किया गया हो उतने दिनों के अर्घ्य को मन्त्र पाठ कर निवेदन करते हुए यथाविधि पुनः व्रत आरम्भ करें अथवा सम्पूर्ण अर्घ्य एक साथ निवेदन करने में असमर्थ होने पर उपवास के अन्त में नित्य व्रतार्घ्य के साथ यथासाध्य प्रत्येक दिन पृथक भाव से उल्लेख कर बाकी कई दिनों के अर्घ्य को पूर्ण कर रखना है। उपवास के तीनों दिन नित्य अर्घ्य रखना होगा।

निवेदित स्वस्त्ययनी-अर्घ्य को स्वेच्छा से अन्य कार्य में व्यय करने पर - शिशु प्राजापत्य व्रत शेष कर पंचम दिवस व्ययित अर्घ्य निवेदन कर पुनः स्वस्त्ययनी-व्रत आरम्भ करना पड़ेगा।

स्वस्त्ययनि-व्रत का निवेदितार्घ्य खो देने से या चोरी होने पर-

अनुतप्त हृदय से स्वीकार करते हुए भिक्षा द्वारा

को नमस्कार करता हूँ। जो ज़ाना जा सका है, इस प्रकार के ज्ञान को मैं अपने सर्वशरीर और इन्द्रिय द्वारा प्रणिपात करता हूँ। मैं परमकारूणिकप्रसूत सर्व प्राणपोषण-प्रद वायु को प्रणाम करता हूँ। मृत्यु, जो जीव के जीवन और वृद्धि को अपलाप कर स्थायित्व को नि:शेष कर देती है- मैं उसे भी नमस्कार करता हूँ, जिससे मैं उससे भी अमृत प्राप्त कर सकूँ। जो सब में और प्रत्येक में विशेष भाव से परिव्याप्त हैं उस विष्णु को अशेष प्रणिपात सहित प्रणाम करता हूँ और सभी के प्रतीक, आब्रहम सर्वदेवमय, अपने उद्धाता सद्गुरु को प्रलीन प्रणिपात सहित बारम्बार प्रणाम करता हूँ।

जो कुछ ज्ञात हुआ है- उस समुदाय के ज्ञान के जो कारण हैं उनके निमित्त उस ऐश्वर्य में स्नात होता हूँ, वे हमारी अराति बुद्धि का दहन करें। वह अग्नि, सर्वप्रकार के दूरित और दुर्गति से नौका जिस प्रकार



सिन्धु पार करती है उसी प्रकार हमलोगों को उत्तीर्ण करें।

उर्द्धगतिशील, अस्ति और प्रगतिपन्न देदीप्यायित वृद्धिपरम, कृष्णपिंगल, विरूपाक्ष, विश्वप्रतीक हे पुरूष! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

## पुरुषोत्तम-वन्दना

वन्दे पुरूषोत्तमम्।
त्वां हीष्टं हृदयोत्सवं श्रीविग्रहम्
वैशिष्ट्यपूरकं समष्ट्युत्सारकम् एकाचारिणम्।
सृजनोत्सं त्वामीश्वरं प्रकटपरायणम्
निखिल-जगज्जीवजीवनवीचिस्पन्दितम्।
व्याक्ताव्यक्तस्वरूपकम् परमदैवतम्
नरं नारायणम्।
मत्स्य-कूर्म-कोल-नृसिंह-वामन-शरीरम्
राम-कृष्ण-बुद्ध-यीशु-मुहम्मद रूपायितम्
चैतन्य रामकृष्णानुकूलं पूर्वतनीपूरणम्
शाश्वतंग्र वर्त्तमानम्।
व्यक्ति-दम्पत्ति गृह-समाज-राष्ट्रोद्धारणे

यजन-याजनेष्टभृति-स्वस्त्ययनी प्रवर्त्तकम्
प्राच्य प्रतीच्य-नियंत्रणे वर्णाश्रमानुशासकम्
आर्यचिरायणम्।
आर्यकृष्टितूर्यध्वनित-पल्लीनिकेतनम्
आर्यभूमि धूलिपावनचिदानन्दकम्
सकलशिल्पविज्ञानयुतं पूर्णं पूराणंम
परात्परकम्!
धर्मग्लानित्रस्त - भुवने वृत्तिघूर्णने
सकलवादव्यामोहर सद्धर्मस्थापकम्
आपूरयन्तमिष्टमेकमद्वितीयकम्
युगादर्शमनुत्तमम्।
प्रेमोच्छलनरवपुधृतं मन्मथमन्मथम्
नवीनार्यतीर्थंकरं विचित्रलीलकम्
विश्वमिलनहवन - नवीनवेददायिनम्
विनायकभाष्करम्।
रणताण्डवद्रोहक्षुब्धे क्लिष्टे विश्लिष्टे लोके
अभ्युत्थित-म्लेच्छाचारापूरित-दिग्मण्डले



जीवनवृद्धयसिकलकं मित्रामित्रवल्लभम्
कल्किरूपमुदग्रम्।
नमामि विप्लाविनं प्रियं परमं कममपि करालम्।
पुरूषोतमम्! पुरूषोतमम्! वन्दे पुरूषोतमम्!

**पुरुषोत्तम प्रणाम**

वन्दे लोकतिलकं सात्वतवार्ता-विभूषणं
अमरकृत्युत्सारणं प्रबुद्धं लोकजीवनं
प्रणय-प्रमत्त-यागदीपनं वन्दे जीवन-जीवनं
सत्पुरुषम्।

**दण्ड प्रणाम मन्त्र**

नित्य दंड व्यवहार के पूर्व श्रीश्रीठाकुरजी को स्मरणकर दंड अपने मस्तक में स्पर्श कराकर निम्नोक्त मन्त्र पाठ करें--
धर्मानुशासन- पालकं श्रीपुरूषोत्तम-प्रसादम्
शान्ति-स्वस्ति-शुभदायकं जीवन-वृद्धिदं
प्रणमामि दंडम्॥

**आचार्य प्रणाम मन्त्र**

ब्रह्ममार्ग प्रदर्शकं प्रेमभक्ति विनायकम
शान्ति स्वस्ति विधायकम आचार्य्यं प्रवरं नौमी॥

## पञ्चवर्हि

१ एकमेवाद्वितीयं शरणम्।
२ पूर्वेषामापूरयितारः प्रबुद्धाः ऋषयः शरणम्।
३ तद्वर्त्मानुवर्त्तिनः पितरः शरणम्।
४ सत्तानुगुणा वर्णाश्रमाः शरणम्।
५ पूर्वापूरको वर्त्तमानः पुरुषोत्तमः शरणम्।
एतदेवार्य्यायणम्। एष एव सद्धर्मः
एतदेव शाश्वतं शरण्यम्।

**अर्थ**- १ मैं एक और अद्वितीय परमात्मा की शरण में जाता हूँ।

२. पूर्व परिपूर्ण करनेवाले प्रबुद्ध ऋषियों की शरण में जाता हूँ।

३. उनके पथ अनुसरणकारी पितृपुरुषों की शरण में जाता हूँ।

४. अस्तित्व के गुण परिपोषक वर्णाश्रम की शरण में जाता हूँ।

५. पूर्व पूरणकारी वर्त्तमान पुरुषोत्तम की शरण में जाता हूँ।



यही आर्यपथ है, यही सद्धर्म है।
यही चिरन्तन शरणयोग्य है।

## सप्तार्चि

१ नोपास्यमन्यद् ब्रह्मणो ब्रह्मैकमेवाद्वितीयम्।
२ तथागतास्तद्वार्तिका अभेदाः।
३ तथागताग्रयो हि वर्त्तमानः पुरुषोत्तमः
पूर्वेषामापूरयिता विशिष्ट-विशेष विग्रहः।
४ तदनुकूल शासनं ह्यनुसर्त्तव्यन्नेतरत्।
५ शिष्टाप्तवेदपितृपरलोकदेवाः श्रद्धेयाः नापोह्यः।
६ सदाचारा वर्णाश्रमानुगजीवनवर्द्धना नित्यं
पालनीयाः।
७ विहितवर्णानुलोमाचाराः परमोत्कर्षहेतवः
स्वभावपरिध्वंसिनस्तु प्रतिलोमाचाराः।

**अर्थः**-१ ब्रहम भिन्न और कोई उपास्य नहीं है, ब्रहम एक और अद्वितीय है।

२ तथागतगण-उनके वार्तावाहक अभिन्न होते हैं।

३ तथागतगण के अग्रणी वर्त्तमान पुरूषोत्तम पूर्व